दैनिक जागरण

सोमवार, 13 अप्रैल 2015 : वैशाख कृष्ण 9 वि. 2072

अनुभव सिखाने के लिए विपत्ति से बड़ा कोई स्कूल नहीं

विकास की अड़चन

एक ऐसे समय जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी विदेश यात्रा के दौरान विदेशी कंपनियों को मेक इन इंडिया अभियान के लिए आमंत्रित करने में लगे हैं तब यह तथ्य सामने आना कोई शुभ संकेत नहीं कि देश में एक हजार करोड़ से ऊपर वाली करीब चार दर्जन परियोजनाएं अदालती फैसलों के इंतजार में अटकी पड़ी हुई हैं। इस स्थिति का निराकरण प्राथमिकता के आधार पर होने की जरूरत है। इसके लिए सरकार को हरसंभव उपाय करने चाहिए, क्योंकि यदि इतनी बड़ी संख्या में परियोजनाएं अटकी पड़ी रहीं तो फिर उसका प्रतिकूल असर विकास पर भी पड़ेगा और साथ ही यह भी सामने आएगा कि सरकार तेजी से काम नहीं कर पा रही है। समस्या केवल विभिन्न अदालती फैसलों के इंतजार में फंसी परियोजनाओं की ही नहीं है। एक बड़ी संख्या में ऐसी परियोजनाएं हैं जो विभिन्न मंत्रालयों के बीच तालमेल के अभाव के कारण उस गति से आगे नहीं बढ़ पा रही हैं जिस गति से उनके बढ़ने की उम्मीद की जा रही है। एक समस्या पर्यावरण संबंधी मंजूरी की भी है। यही नहीं यह भी सामने आ रहा है कि नौकरशाही की सुस्ती के कारण भी कई परियोजनाएं आगे नहीं बढ़ पा रही हैं। चूंकि सरकार का एक वर्ष का कार्यकाल पूरा होने को है इसलिए अब आम जनता भी अनुकूल नतीजों की प्रतीक्षा में है। जनता इससे संतुष्ट नहीं हो सकती कि सरकार के स्तर पर विकास परियोजनाओं को आगे बढ़ाने के लिए बहुत कुछ किया जा रहा है और आए दिन ऐसे बयान भी सामने आ रहे हैं कि अमुक-अमुक परियोजनाओं को गति देने की कोशिश की जा रही है, लेकिन बात तब बनेगी जब जमीन पर भी कुछ होता हुआ दिखे। केवल काम होना ही पर्याप्त नहीं है। ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि काम होते हुए दिखे भी।

यह ठीक है कि कुछ विकास संबंधी परियोजनाएं ऐसी भी हैं जो इसलिए आगे नहीं बढ़ पा रही हैं, क्योंकि उनसे संबंधित विधेयक संसद में अटके हुए हैं, लेकिन इसके लिए सरकार को ही सक्रियता दिखानी होगी और इसके बावजूद दिखानी होगी कि विपक्ष का रवैया सहयोगपूर्ण नहीं है। केंद्र सरकार को जिस तरह भूमि अधिग्रहण के मामले में दोबारा अध्यादेश का सहारा लेना पड़ा उससे उसकी प्रतिबद्धता का प्रदर्शन तो हुआ, लेकिन यदि इस अध्यादेश को कानून का रूप नहीं दिया जा सका तो विकास के प्रति उसकी संकल्पबद्धता और तेजी से तरक्की के दावों पर प्रश्नचिह्न लगने तय हैं। इसलिए और भी, क्योंकि एक बड़ी संख्या में परियोजनाएं ऐसी हैं जो भूमि अधिग्रहण कानून को लेकर उपजे संशय के कारण ठप पड़ी हुई हैं। जहां तक मेक इन इंडिया अभियान की बात है तो इसमें दो राय नहीं कि इस अभियान को लेकर अंतरराष्ट्रीय औद्योगिक-व्यापारिक जगत में एक हलचल है, लेकिन विदेशी कंपनियों को निवेश के लिए जैसा उपयुक्त माहौल चाहिए उसका निर्माण अभी भी नहीं हो सका है। निवेश संबंधी समस्याओं के समाधान के लिए जैसे तंत्र का निर्माण किया जाना चाहिए था उसका कुल मिलाकर अभाव ही नजर आता है और यही कारण है कि विदेशी कंपनियां अभी हाथ बांधे खड़ी हुई नजर आ रही हैं। यह स्थिति क्यों है, इससे सरकार अपरिचित नहीं हो सकती। उसके लिए आवश्यक है कि वह कथनी और करनी के बीच के अंतर को कम करने के लिए तेजी से सक्रिय हो। इसकी आवश्यकता इसलिए भी है, क्योंकि घरेलू उद्योगपतियों का एक तबका ऐसा है जो सरकारी तंत्र की निष्क्रियता का उल्लेख करने में लगा हुआ है।

राहत की कवायद

राजधानी के विभिन्न रेलवे स्टेशनों पर यात्रियों की सुविधा के लिए लिफ्ट लगाने की योजना स्वागतयोग्य है। उत्तर रेलवे के दिल्ली मंडल ने नई दिल्ली और पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशनों सहित अन्य स्टेशनों पर कुल 28 लिफ्ट लगाने का फैसला किया है। इससे निश्चित रूप से यात्रियों को बहुत सुविधा होगी। विशेषकर बुजुर्ग और शारीरिक रूप से अक्षम यात्रियों के लिए रेलवे की यह कवायद बेहद फायदेमंद साबित होगी। यह सुविधा इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि राजधानी के विभिन्न स्टेशनों पर यात्रियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है और होली, दीपावली, छठ पूजा आदि मौकों पर ऐसा देखा गया है कि रेलवे स्टेशनों की सीढ़ियों पर यात्रियों का दबाव बहुत बढ़ जाता है। ऐसे में कई दुर्घटनाएं भी हो चुकी हैं। ऐसे में यदि प्लेटफार्म पर पहुंचने के लिए यात्रियों के लिए लिफ्ट अथवा एस्केलेटर की व्यवस्था की जाती है तो दुर्घटनाओं को रोका जा सकेगा।

दिल्ली के प्रमुख रेलवे स्टेशनों पर करीब एक दर्जन एस्केलेटर पहले से भी लगाए गए हैं और यात्रियों को इनसे हुई सुविधा को ध्यान में रखकर ही उत्तर रेलवे के दिल्ली मंडल ने अब सभी प्रमुख स्टेशनों पर लिफ्ट और एस्केलेटर की सेवा उपलब्ध कराने की प्रक्रिया शुरू कर दी है। इन सुविधाओं का फायदा यात्री दिल्ली मेट्रो के विभिन्न स्टेशनों पर पहले से ही उठा रहे हैं। बुजुर्ग, महिलाएं, शारीरिक रूप से अक्षम लोगों को तथा बीमार यात्रियों को लिफ्ट से बहुत सुविधा होती है। ऐसे में यात्रियों को दिल्ली के स्टेशनों पर यह सुविधा उपलब्ध होने का बहुत लाभ मिलने की उम्मीद है। सुविधाओं के विस्तार का एक असर यह देखने में आ रहा है कि अब बुजुर्ग भी अकेले दम पर यात्रा के लिए निकल पड़ते हैं। ऐसे यात्रियों के लिए लिफ्ट या एस्केलेटर की सुविधा सचमुच बड़ी राहत देने वाली है। अक्सर यह देखा जाता है कि सरकारी एजेंसियां सुविधाओं की घोषणा तो कर देती हैं लेकिन उन्हें पूरा करने में या तो लंबा अरसा गुजर जाता है या कई बार इन योजनाओं पर अमल ही नहीं हो पाता, लिहाजा यह देखना महत्वपूर्ण होगा कि रेल यात्रियों को बेहतर सेवा और सुविधा देने की यह योजना समय पर पूरी हो पाती है अथवा नहीं। क्योंकि रेलवे स्टेशनों पर यात्रियों का दबाव लगातार बढ़ता जा रहा है। नई दिल्ली, पुरानी दिल्ली, हजरत निजामुद्दीन तथा आनंद विहार जैसे स्टेशनों से प्रतिदिन लाखों की संख्या में यात्री आते-जाते हैं। ऐसे में इन्हें रेलवे द्वारा दी जाने वाली सुविधाएं जितनी जल्दी उपलब्ध कराई जाएं उतना अच्छा रहेगा।

साझा चुनौती का सामना

पर्यावरण परिवर्तन के प्रभावों से निपटने के लिए हो रहे उपायों का विश्लेषण कर रही हैं **ज्योति पारिख**

टिकाऊ विकास पर हुए रियो सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन के मसले पर दुनिया के 100 देशों के प्रमुखों ने संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन को स्वीकार किया था, लेकिन आज 23 वर्ष बाद दुनिया एक बार फिर से चौराहे पर खड़ी है कि आगे के कदम किस तरह उठाए जाएं। कई देश चाहते हैं कि सभी देशों की जवाबदेही को सुनिश्चित करने के लिए उन्हें एक कानूनी संधि से जोड़ा अथवा बांधा जाए। जीवाश्म ईंधनों के बढ़ते प्रयोग से यह चिंता लगातार बढ़ी है कि किस तरह ग्रीन हाउस गैसों (जीएचजी) को घटाया जाए। वास्तव में अब बहस ग्रीन हाउस गैसों को कम करने से आगे बढ़ चुकी है और इसमें तकनीक, वित्त भी शामिल हो चुका है और यह भी कि किस तरह जलवायु परिवर्तन को अपने अनुकूल बनाया जाए। समझौतों की यह प्रकृति आने वाले समय में भारत के विकास के रास्ते पर भी अपना प्रभाव डालेगी। इसमें नवीकरणीय ऊर्जा और ऊर्जा का कुशल उपयोग भी शामिल है। यह दीर्घकालिक दृष्टि से लाभप्रद है, लेकिन जलवायु संधि के मद्देनजर इनकी तात्कालिक आवश्यकता अपेक्षाकृत महंगी पड़ सकती है, जो कि भारत बाद में करना चाहता है। अभी तक स्थिति यही रही है कि भारत अपनी क्षमता के लिहाज से जलवायु परिवर्तन के मसले से निपटता रहा है, लेकिन 2015 में पेरिस बैठक के बाद नया प्रारूप अस्तित्व में आ चुका है। इसके मद्देनजर हम ग्रीन हाउस गैसों को कम करने में अपने राष्ट्रीय योगदान की घोषणा कर सकते हैं।

उत्सर्जन में यह कटौती शेष विश्व के साथ भारत के भी हित में है। इसलिए हमें चाहिए कि वैश्विक स्तर पर शुरू हुई इस पहल को रोकें नहीं, बल्कि प्रोत्साहित करें। भारत की चिंता ग्रीन हाउस गैसों में राष्ट्रीय योगदान के नए स्तर को लेकर है। यह भारत की राष्ट्रीय विकास बाध्यताओं के प्रति चिंता पैदा करता है। बिजली की कमी के बावजूद भारत को लाखों घरों तक बिजली पहुंचानी है, स्वच्छता के मुद्दे का समाधान करना है, पानी, साक्षरता और स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया करानी हैं। इसके लिए अतिरिक्त संसाधन, नई इमारतें, सड़क और बुनियादी ढांचे की जरूरत होगी, लेकिन इनसे ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में और इजाफा होगा। इसके लिए गरीबों के लिए किए गए एमडीजी यानी सहस्राब्दि विकास लक्ष्य के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को स्वयं अपने और संयुक्त राष्ट्र के मापदंडों के अनुरूप पूरा करना होगा। जो भी हो, उपरोक्त मजबूरियों के बावजूद भारत ने पहले ही महत्वाकांक्षी और साहसिक कदम उठाने शुरू कर दिए हैं। ग्रीन हाउस गैसों में उल्लेखनीय कमी के लिए उठाए गए साहसिक कदमों के तहत 2022 तक 100 गीगावाट सौर ऊर्जा, 60 गीगावाट पवन ऊर्जा, 15 गीगावाट पनबिजली और जीवाश्म ऊर्जा का लक्ष्य है। यह न केवल वर्तमान वैश्विक मापदंडों के अनुरूप हैं, बल्कि ऐतिहासिक भी हैं।

इसके अलावा कुछ अन्य प्रस्ताव भी हैं, जैसे कि मेट्रो को 27 शहरों तक पहुंचाना। बचत लैंप योजना, जिसके तहत सामान्य बल्बों की कीमत पर सीएफएल बल्ब उपलब्ध कराना। एक सौ स्मार्ट सिटी का प्रस्ताव, स्वच्छ भारत अभियान। पेट्रोल और डीजल पर सेस लगाना और स्वच्छ ऊर्जा के लिए जरूरी निवेश जुटाने के लिए कोयले पर नया उपकर लगाना। इनमें से अनेक प्रस्ताव बहुत महत्वाकांक्षी हैं। उन्हें महज यह कहकर खारिज नहीं किया जा सकता कि इनकी घोषणा पहले ही की जा चुकी है। इन्हें किसी न किसी रूप में लागू किया ही जाना चाहिए। भारत को उत्सर्जन में और कटौती लाने के लिए अतिरिक्त प्रयास करने होंगे। उत्सर्जन में कटौती के अनेक उपाय आपस में जुड़े होते हैं और परस्पर लाभकारी सिद्ध होते हैं, जैसे कि वायु प्रदूषण में कमी लाने से ऊर्जा सुरक्षा में वृद्धि होती है अथवा सरकार को अधिक राजस्व प्राप्त होता है।

भारत को यह स्पष्ट करने की जरूरत है कि उपायों का उद्देश्य कुछ भी अथवा उनके सह-लाभ कुछ भी हों, उन्हें उचित पहल के रूप में गिना जाना चाहिए-खासकर तब तक जब तक जीएचजी उत्सर्जन को कम नहीं कर लिया जाता। जब तक यह नहीं किया जाता तब तक भारत के पास देरी का अपना लाभ है। इस तरह पहले से घोषित योजनाओं को उत्सर्जन कटौती के राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। इन तगड़े लक्ष्यों को पूरा करने के लिए पैसे और तकनीक की आवश्यकता होगी।

हम ऊंची कीमत पर सर्वश्रेष्ठ तकनीकों की ओर बढ़ सकते हैं, जैसे कि एलईडी लैंप। इस प्रक्रिया को समस्त विश्व के लिए जरूरी माना जाना चाहिए ताकि विकासशील देशों की प्रगति के साथ उत्सर्जन की मात्रा न बढ़ने पाए। उदाहरण के लिए बिजली की हमारी जरूरत बढ़ सकती है, लेकिन एलईडी को अपनाने से हम अधिक बिजली खपत को नियंत्रित कर सकते हैं। किसी तकनीक को अपनाना अपने लिए ही फायदेमंद है और इससे वैश्विक कार्बन प्रबंधन में मदद मिलती है। भारत को न केवल एमडीजी और समावेशी विकास को अपनाना है, बल्कि तकनीकों को अपनाने में भी पैसा निवेश करना है। हमें न केवल जीएचजी में कमी के लिए निवेश की आवश्यकता है, बल्कि पर्यावरण में बदलाव से उभरी स्थिति का सामना करने के लिए भी।

उदाहरण के लिए शहर आर्थिक विकास के इंजन होते हैं और कुछ दिनों का व्यवधान भी उनमें बड़े पैमाने पर नुकसान को जन्म दे सकता है। यह नुकसान जान-माल का भी हो सकता है और बुनियादी ढांचे का भी। शहर बाढ़, सूखे (पानी की कमी), तूफान, अत्यधिक बारिश, तापमान में उतार-चढ़ाव, साइक्लोन जैसी समस्याओं से कभी भी जूझ सकते हैं। आज के दौर में शहरों के लिए पर्यावरण परिवर्तन के प्रति अनुकूलता कायम करना एक बड़ी चुनौती के रूप में देखा जा रहा है। श्रीनगर और विजाग में हाल की घटनाओं में यह देख भी चुके हैं। हमें इसके लिए पहले से तैयार होना होगा। इसी तरह गांवों के लिए भी पर्यावरण परिवर्तन के प्रभावों को समझना होगा। इन क्षेत्रों में कृषि पर्यावरण परिवर्तन से खास तौर पर प्रभावित होती है। फसल चक्र में हो रहे परिवर्तन को हम साफ तौर पर देख सकते हैं जो कि हिमालयी राज्यों हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड आदि की पारिस्थितिकी में हो रहे बदलाव का परिणाम हैं। इसके अतिरिक्त जंगलों में लगने वाले आग अथवा गैर-वनीय उत्पादों के नुकसान को भी देखा जा सकता है। स्थिति यही है कि तमाम ग्रामीण रोजगार कृषि पर ही निर्भर हैं। यह तमाम गैर कृषि अथवा कृषि से जुड़ी गतिविधियां जलवायु परिवर्तन के कारण प्रभावित हुई हैं। भारत को चाहिए कि वह इस तरह हो रहे विविध नुकसानों की रिपोर्ट तैयार करे ताकि सभी राज्यों को इसके बारे में प्रशिक्षित अथवा जागरूक किया जा सके। स्वाभाविक तौर पर वैश्विक जलवायु कोष इन नुकसानों की भरपाई करने की दिशा में कुछ हद तक कारगर हो सकता है।

(लेखिका इंटीग्रेटेड रिसर्च एंड एक्शन फार डेवलपमेंट की एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर हैं)

response@jagran.com

उचित पहल

◆ भारत को यह स्पष्ट करने की जरूरत है कि उसके उपायों का उद्देश्य कुछ भी अथवा उनके सह-लाभ कुछ भी हों, उन्हें उचित पहल के रूप में गिना जाना चाहिए

अंबेडकर का अधूरा सपना

समाज के एक हिस्से को सिर पर मैला ढोने की कुप्रथा से मुक्ति न मिलने पर निराशा जता रहे हैं **अनुरोध ललित जैन**

मंगलवार को डॉ. भीमराव अंबेडकर के 125वें जन्म समारोह पर एक तरफ राजनीतिक पार्टियां उन्हें फूलों से श्रद्धांजलि देंगी, लेकिन कोई भी शायद यह देखने की जरूरत महसूस नहीं करेगा कि उनका एक सपना किस तरह अभी भी अधूरा पड़ा है। उनके एक महत्वपूर्ण विषय पर राज्य सरकारों की नींद टूटने का नाम नहीं ले रही है। डॉ. अंबेडकर ने दलित समाज पर थोपी गई मैला ढुलाई प्रथा का सदा विरोध किया, लेकिन आजादी के 68 साल बाद भी हमारा समाज इन कमजोर तबके के लोगों को इस कुप्रथा से आजाद नहीं करा पाया है। यह महज एक सामाजिक बुराई भर नहीं है, बल्कि हमारे लोकतंत्र पर भी सवाल उठाता है। डॉ. अंबेडकर ने एक बार यह कहा था कि भारत में किसी व्यक्ति के लिए मैला ढुलाई का कार्य उसके कर्म से नहीं जन्म से तय होता है, चाहे वह यह कार्य करे या न करे।

मैला ढुलाई मानव मल-मूत्र को हाथों से साफ करने का कार्य है, जिसमें सफाई कामगार शौचालय (ड्राई टॉयलेट) से मल-मूत्र को झाड़ू या टिन प्लेट से टोकरी में डालकर सामाजिक कलंक के इस प्रतीक को सिर पर ढोते हैं। भारत में जातिगत कार्यों के विभाजन की परंपरा सदियों से चली आई है। विभाजन में शूद्र समुदाय के लोगों को निम्न स्तर के काम दिए जाते थे और मैला ढुलाई उसमें से ही एक कार्य था। इस कुप्रथा को खत्म करने की दिशा में पहल आजादी के बाद से शुरू हुई। 1949 में बर्वे समिति, 1955 में काका कालेकर समिति और बाद में मलकानी और पंड्या समिति ने अपने सुझाव सरकार को समय-समय पर दिए। परंतु इस दिशा में ठोस कदम 1993 में उठे जब सरकार ने एक एक्ट पास किया। इसके अंतर्गत शुष्क शौचालय (ड्राई टॉयलेट) बनाने या मैला ढुलाई कर्मचारी को नौकरी देने पर सजा या आर्थिक दंड का कड़ा प्रावधान था। इसके बाद भी नगर पालिका, नगर निगम, भारतीय रेलवे और रक्षा कंपनियों एवं ग्रामीण विभागों में भी यह कार्य चलता रहा। वर्तमान में भी विभिन्न सरकारी और गैर सरकारी सर्वे के अनुसार करीब 8 से 10 लाख लोग मैला ढुलाई का काम कर रहे हैं। यह आंकड़ा उन राज्य सरकारों के लिए भी शर्म का विषय है जो अभी तक मैला ढुलाई की परंपरा से पूरी तरह इन्कार कर रही थीं।

1993 के एक्ट की विफलता का एक मुख्य कारण सरकार का लघु दृष्टिकोण रहा, जो कि मैला ढुलाई को सफाई का मुद्दा मानती रही, जबकि यह सामाजिक प्रथा और जातिगत पहलू से जुड़ा मुद्दा था। सामाजिक दबाव के चलते लोग यह कार्य मजबूरी में करते रहे और जो लोग वैकल्पिक रोजगार के कार्य करने लगे उन्हें भी सामाजिक बहिष्कार झेलना पड़ा। परिणामस्वरूप वे वापस मैला ढुलाई का कार्य करने लगे। ह्यूमन राइट वाच के भी एक अध्ययन में माना गया कि दलित समाज की महिलाओं पर थोपा गया मैला ढुलाई और सफाई का कार्य सामाजिक बहिष्कार के डर से बंद नहीं हो रहा है।

अंततः नेशनल एडवाइजरी काउंसिल के हस्तक्षेप के बाद तत्कालीन संप्रग सरकार ने माना कि यह मसला सफाई और स्वच्छता का नहीं, अपितु सामाजिक न्याय का है और तब 2013 में मैन्युअल स्कैवेंजर एक्ट पारित किया गया। 2013 का एक्ट 1993 के एक्ट से कुछ बेहतर था, क्योंकि इसमें मैला ढुलाई की परिभाषा का विस्तार कर उन सफाई कर्मचारियों को भी जोड़ा गया जो मानव मल-मूत्र को शुष्क शौचालय के अलावा इनसैनेटरी टॉयलेट, खुले गटर, सैप्टिक टैंक, रेलवे की पटरी इत्यादि जगह पर साफ करते हैं। इस परिभाषा में नगर निगम, रेलवे, आदि जगह पर भी मैला उठाने का कार्य करने वाले शामिल हो गए। इसके अलावा 2013 के एक्ट में इन लोगों की पुनर्वास योजना का एक ठोस कार्यक्रम भी जोड़ा गया जिसमें राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्तीय विकास निगम के माध्यम से स्वरोजगार, मकान और अन्य सुविधाएं भी मुहैया कराई गईं। ऐसा इसलिए किया गया ताकि मैला ढोने वाले वर्ग को राहत मिल सके।

2013 में यह एक्ट आने के बाद भी राज्य सरकारों की उदासीनता की स्थिति जस की तस बनी हुई है। पिछले साल केंद्र सरकार ने राज्य सरकारों को 2013 मैन्युअल स्कैवेंजर एक्ट को सख्ती से लागू करने और मैन्युअल स्कैवेंजर और अस्वच्छ शौचालय का व्यापक सर्वे करने को कहा। विडंबना यह है कि जो राज्य सरकारें 1993 से अपने हलफनामे में मैन्युअल स्कैवेंजर की गिनती को छुपाती आ रही हैं तो क्या वे आसानी से अपना झूठ सामने आने देंगी? अभी बेंगलूर अधिवेशन के पहले दिन भारतीय जनता पार्टी ने भी घोषणा की थी कि 2016 तक इस कुप्रथा को बंद करके इससे जुड़े 23 लाख परिवारों को मुक्त करवाएंगे। वैसे 23 लाख का यह आंकड़ा कहां से आया, यह भी एक विश्लेषण का विषय है।

अगर मान भी लिया जाए कि सरकार की इस पहल से मैला ढुलाई बंद हो जाएगी, लेकिन हमारे लिए यह ज्यादा जरूरी होगा कि इन परिवारों को मुख्य धारा में लाकर समाज में इनकी स्वीकार्यता बढ़ाई जाए। आज भी बहुत जगह दलित समुदाय के लोग सामूहिक जलस्रोत से वंचित हैं तो मंदिरों में उनका प्रवेश वर्जित है। कहीं उनके चाय के कप और बर्तन अलग हैं तो दुकानों में उनका जाना प्रतिबंधित है। एक सर्वे में 27 प्रतिशत लोगों ने माना कि वे अभी भी छुआछूत का पालन करते हैं। यह प्रथा हिंदी भाषी राज्यों में सबसे जयादा है, जिसमें कि मध्य प्रदेश में इसका प्रतिशत 53 है तो उत्तर प्रदेश में 43। सवाल है कि क्या हम डॉ. अंबेडकर को सिर्फ उनकी जयंती के समारोह पर याद करेंगे या सच में उनके अधूरे सपनों को पूरा करेंगे? डॉ. अंबेडकर को हमारी सच्ची श्रद्धांजलि उनकी प्रतिमा पर फूल अर्पित करके नहीं, परंतु उनके सपनों के अनुसार दलितों को सशक्त बनाकर और उन्हें जात-पांत के दुश्चक्र से बाहर निकाल कर होगी।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

response@jagran.com

सच्चा सम्मान

◆ डॉ. अंबेडकर को सच्ची श्रद्धांजलि उनकी प्रतिमा पर फूल अर्पित करके नहीं, परंतु उनके सपनों के अनुसार दलितों को सशक्त बनाकर होगी

ऊर्जा

परमात्म तत्व

परमात्मा का अर्थ है-दिव्य प्रकाश और आत्मा उसी का एक प्रतिबिंब है। इसीलिए पदार्थ को समझने वाले आत्मा की बात नहीं समझते। पदार्थवादी केवल पदार्थ को ही पहचानते हैं। दूसरी ओर आत्मा या आत्म-तत्व पदार्थ को नहीं पहचानता। ऐसा इसलिए, क्योंकि पदार्थ और आत्मा में कोई मेल ही नहीं है। इसीलिए पदार्थवादी लोग आत्मा के अस्तित्व को नहीं स्वीकारते, लेकिन जो लोग आध्यात्मिक दृष्टि रखते हैं, वे लोग जानते हैं कि पदार्थ का मूल रूप ऊर्जा से अधिक और कुछ नहीं है। दुनिया की प्रत्येक वस्तु ऊर्जा है, इसलिए वे लोग प्रत्येक वस्तु को पदार्थ मानते हैं, ऐसे व्यक्ति आत्मा के अर्थ को नहीं समझते। आज प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से परिचित तो है, लेकिन स्वयं से परिचित नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं से परिचित कराने का प्रयास किया जा रहा है।

आज मनुष्य जितना दुखी है, उतना पहले कभी नहीं था। इसका एक ही कारण है, आत्म-विस्मरण। आज प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को छोड़कर सब कुछ जानता है। यही उसकी अशांति का कारण है। जिस दिन मनुष्य स्वयं को जान लेगा, अपने होने का अर्थ समझ लेगा, उस दिन वह सुखी हो जाएगा। आखिर दुख का कारण भी तो यही है। जहां सुख मिलता है, वहां से हम पलायन कर जाते हैं। ठीक उसी प्रकार जैसे प्यास लगी हो, तो नदी किनारे न जाएं और मरुभूमि में जाकर पानी खोजें, क्योंकि सुख बाहर नहीं मिलता। सुख तो अंदर निहित है, लेकिन इसके लिए आपको अपने भटकाव को रोकना पड़ेगा। जब आप बाहर दौड़ना बंद कर देंगे तो स्वतः अंदर की ओर मुड़ जाएंगे। अंदर पहुंचते ही आपको परम सुख की प्राप्ति हो जाएगी। इसीलिए हमारे संतों ने इस सुख को आत्मानंद कहा है और यही आत्मानंद परमानंद बन जाता है। मनुष्य जो कुछ भी करता है वह केवल सुख प्राप्त करने के लिए है। वह जो भी कार्य व व्यापार करता है, उसका एक ही उद्देश्य होता है कि वह अधिक से अधिक सुख प्राप्त करे और इस सुख के लिए वह अपना सब कुछ गंवा देता है। अगर मनुष्य के जीवन में सुख प्राप्त करना ही लक्ष्य है, तो उसे वह सुख बाहर कहीं नहीं ले जाता। उसे अंतर्मुखी बनना पड़ेगा। आज प्रत्येक व्यक्ति सुख की खोज में गलत दिशा में दौड़ रहा है, उसे दृष्टि दोष है कि सुख, धन-संपत्ति या वस्तुओं के संग्रह में है, क्योंकि आज तक किसी को भी वस्तुओं के संग्रह से सुख नहीं मिला।

◆ आचार्य सुदर्शन महाराज

जागरण Junction AAPKI AWAAZ, AAPKA BLOG www.jagranjunction.com

राजनीति में बाउंसर

देश में पिछले अनेक वर्षों से निजी सिक्योरिटी कंपनियां विभिन्न सुरक्षा सेवाएं दे रही हैं। उन्ही में से एक बाउंसर सेवा है। आजकल निजी आयोजनों में बाउंसरों की सेवाएं ली जाने लगी हैं, लेकिन किसी राजनीतिक पार्टी या सरकार ने सेवाएं ली हों, यह पहली बार देखने को मिला। आम आदमी पार्टी की दिल्ली सरकार द्वारा भ्रष्टाचार संबंधी शिकायत के लिए हेल्प लाइन नंबर जारी करने के लिए तालकटोरा स्टेडियम में एक कार्यक्रम आयोजित किया गया। यह एक सरकारी कार्यक्रम था। सुरक्षा व्यवस्था के लिए पर्याप्त संख्या में स्टेडियम के अंदर और बाहर दिल्ली पुलिस तैनात की गई थी। फिर भी लगभग दो दर्जन बाउंसर तैनात किए गए थे। अब प्रश्न उठता है कि बाउंसरों की क्या आवश्यकता पड़ गई? सरकारी कार्यक्रम में बाउंसर क्यों? किन लोगों से अव्यवस्था फैलने का डर था? क्या अपने कार्यकर्ताओं से भय था? यदि हां तो यह कैसी आमजनों की पार्टी है। इन्हीं बाउंसरों ने आयोजन में महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार किया। मीडिया के लोगों के साथ भी ऐसा व्यवहार हुआ। – डॉ. एचसी सिंह

पूरा ब्लॉग पढ़ने के लिए यथावत टाइप करें : http://bit.ly/1CC1vDZ

भाजपा का वन-मैन शो

हाल ही में बेंगलुरू में भारतीय जनता पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक में यह जाहिर हो गया कि सामूहिक नेतृत्व वाली यह पार्टी अब वन मैन शो में तब्दील होने जा रही है। मोदी ने इसी मकसद से राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक में अपना विराट रूप दिखाया। शुरू में यह धारणा बन रही थी कि मोदी भले ही प्रधानमंत्री बन गए हों लेकिन वह राजनाथ के प्रोडक्ट हैं। राजनाथ सिंह को मंत्रिमंडल में नंबर टू हैसियत के साथ गृह मंत्रालय नवाजना मोदी की मजबूरी समझा गया था, लेकिन मोदी ने जल्दी ही स्पष्ट कर दिया कि पार्टी में किसी भी नेता का कद उनके कंधे के बराबर भी नहीं है। राजनाथ सिंह से इसीलिए उन्होंने कुछ ही दिनों में पार्टी का अध्यक्ष पद छिनवा दिया। – केपी सिंह

पूरा ब्लॉग पढ़ने के लिए यथावत टाइप करें : http://bit.ly/1cmEz6T

पाठकनामा

pathaknama@nda.jagran.com

किसानों की चिंता

जाना पहचाना संकट शीर्षक से लिखे लेख में देविंदर शर्मा ने किसानों की बदहाली का उल्लेख किया है जो देश की जनता का पेट भरने वाले किसान की मनोदशा, आर्थिक दशा और व्यथा को स्पष्ट करता है। देश के लोगों की नब्ज चलती रहे इसके लिए पूरे वर्ष खेतों में किसान काम करता है, बाकी चैन से सोते हैं और जब मौसम का प्रहार होता है तो उसकी फिक्र कौन करता है? उसे भाषण नहीं राहत चाहिए, आश्वासन नहीं तुरंत आर्थिक सहायता चाहिए। कहीं किसान आयोग अपनी टिप्पणी करता है, कहीं अन्य सरकारी-ग़ैर सरकारी संस्थाएं गोष्ठी करती हैं कि किसानों की आर्थिक हालत सुधारी जाए। बीस वर्षों में तीन लाख से ज्यादा किसान आत्महत्या कर चुके हैं। विपक्ष भूमि अधिग्रहण के मुद्दे को लेकर राजनीति कर रही है। हमारी सरकार को चाहिए कि वह किसानों के लिए सच्चे दिल से कार्य करे, क्योंकि किसानों को किसी और से नहीं सबसे ज्यादा सरकार से ही उम्मीद है। यह उम्मीद टूटनी नहीं चाहिए।

डॉ. राजेश कथवाल

kt1977rajesh@gmail.com

शिक्षा का उद्देश्य

एस शंकर ने लेख यूजीसी का पुनर्गठन, में देश की उच्च शिक्षा प्रणाली की सही विवेचना की है। सच यह है कि पूरी शिक्षा प्रणाली ही अनुत्पादक हो गई है। शिक्षा का उद्देश्य परीक्षा उत्तीर्ण कर प्रमाण-पत्र प्राप्त करना रह गया है। पिछले वर्षों में बिहार व उप्र के स्कूलों में जायजा लेने गए एक टीवी चैनल ने दिखाया था कि स्वयं शिक्षक ही महीनों व दिनों को अंग्रेजी में लिखने में असमर्थ थे। देश के राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री का नाम नहीं बता सके थे। अब सामूहिक व पेपर आउट कराना व्यवसाय हो गया है। शिक्षा समाज-सेवा नहीं, बल्कि व्यापार बन गया है जिसमें नैतिकता का अर्थ नहीं रहा। शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ प्रमाणपत्र बांटना न होकर उसका ज्ञानवर्द्धक, योग्य,चरित्र-निर्माण, रोजगारपरक, आत्मनिर्भर, देशप्रेमी, विवेकी क्षमता वाला नागरिक बनाना होना चाहिए। हमें प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन करना होगा।

opguptam@gmail.com

उपभोक्ता मूल्य

नवंबर 2014 से फरवरी 2015 तक लगातार चार महीने मुद्रा-स्फीति की दर नकारात्मक रही। पर उपभोक्ता मूल्यों का जहां तक सवाल है, वैसी गिरावट नहीं देखी गई। अनिवार्य वस्तु अधिनियम जैसे तमाम उपभोक्ता कानूनों को लागू करने की जिम्मेदारी राज्य सरकारों की है। इनके बिना फुटकर दामों में कमी की उम्मीद नहीं की जा सकती। उत्तर प्रदेश में शासन-प्रशासन के स्तर पर आज तक खुदरा मूल्यों को थोक मूल्यों के समान कम करने की कोई कार्रवाई नहीं हुई।

अजय मित्तल, सेक्टर 62, नोएडा

स्वागत योग्य कदम

केंद्र सरकार द्वारा महिला आयोग को अदालत जैसे अधिकार देने की पहल निःसंदेह एक स्वागत योग्य कदम है। इस तरह के अधिकारों की जरूरत महिला आयोग को एक लंबे समय से थी। इससे महिला आयोग को काफी बल मिलेगा और इसकी साख बढेगी। महिला आयोग का गठन महिलाओं की सुरक्षा एवं सशक्तीकरण के लिए किया गया है, परन्तु कई बार अपेक्षित अधिकारों के अभाव में वह दोषियों को सजा नहीं दे पाती है और पीड़ित पक्ष को अदालत में न्याय की लम्बी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है जिसका फायदा अपराधियों को होता है। महिला आयोग को अदालत सरीखे अधिकार मिलने से एक तरफ पीड़ित पक्ष को न्याय मिलने की प्रक्रिया त्वरित होगी वही संबंधित अदालतों पर बोझ कम होगा। साथ ही, महिला आयोग के स्वतंत्र एवं त्वरित निर्णय लेने से महिलाओं पर होने वाले अपराधों पर लगाम लगेगी।

neetalx8@outlook.in

कार्य प्रगति पर

आप किसी भी हाई वे पर गुजरें तो आपको सड़क किनारे खुदाई होती या रोड़ी सीमेंट पड़ा दिखेगा। आपको अपनी कार के शीशे बंद ही रखने पड़ेंगे और जिनके सड़क किनारे मकान होते हैं तो जिंदगी भर धूल मिटटी खाते रहते हैं। बड़ी बात यही है कि एक बोर्ड कभी भी सड़क से नहीं हटता कि कार्य प्रगति पर है। कार्य क्या प्रगति पर है कि पहले यह टू लेन सड़